• कविताएं..

कौन हो तुम...

तंग गलियों से होकर
गुजरता है कोई
आहिस्ता-आहिस्ता
फटा लिबास ओढ़े
कहता है कोई
आहिस्ता-आहिस्ता
पैरों में नहीं चप्पल उसके
कांटों भरी सेज पर
चलता है कोई
आहिस्ता-आहिस्ता
आंखें हो गई हैं अब
उसकी बूढ़ी
धंसी हुई आंखों से
देखता है कोई
आहिस्ता-आहिस्ता
एक रोज पूछा मैंने
उससे,
कौन हो तुम
'तेरे देश का कानून'
बोला आहिस्ता-आहिस्ता!!

-अंजना बख्शी

उदासी...

शान्त जीवन में उतरना
उसे भाता है
उतरी वह बहुत हौले से
और बनी रही यहीं
अब उसे कहीं नहीं जाना
कोई हड़बड़ी नहीं उसे
अब उससे बोलना-बतलाना है
बहुत आसान
हो सकता है कल को वह बने
मेरी सबसे अच्छी सखी
खुश हूं कि इस बार पहले की
तरह
स्वप्न में नहीं
उतरी है वह जीवन के ठीक
बीचोंबीच
लाख चाहने पर भी
नहीं कह सकती उसे लौट जाने
को
उदासी ने भी
कहां पूछा था
उतरने से पहले
मेरे पार्श्व में।

-विपिन चौधरी

• कहानी/—मोहन राकेश

मलबे का मालिक...

ओ गतांक से आगे...

गनी मियां! मनोरी ने पहचानकर कहा।

हां, बेटे मैं तुम लोगों का गनी मियां हूं। चिराग और उसके बीवी-बच्चे तो अब मुझे मिल नहीं सकते, मगर मैंने सोचा कि एक बार मकान की ही सूरत देख लूं! बुड्ढे ने टोपी उतारकर सिर पर हाथ फेरा, और अपने आंसुओं को बहने से रोक लिया।

तुम तो शायद काफी पहले यहां से चले गये थे, मनोरी के स्वर में संवेदना भर आयी।

हां, बेटे यह मेरी बदबख्ती थी कि मैं अकेला पहले निकलकर चला गया था। यहां रहता, तो उसके साथ मैं भी... कहते हुए उसे एहसास हो आया कि यह बात उसे नहीं कहनी चाहिए। उसने बात को मुंह में रोक लिया पर आँखों में आये आंसुओं को नीचे बह जाने दिया।

छोड़ो गनी मियां, अब उन बातों को सोचने में क्या रखा है? मनोरी ने गनी की बांह अपने हाथ में ले ली। चलो, तुम्हें तुम्हारा घर दिखा दूं।

गली में खबर इस तरह फैली थी कि गली के बाहर एक मुसलमान खड़ा है जो रामदासी के लडके को उठाने जा रहा था... उसकी बहन वक्त पर उसे पकड़ लायी, नहीं तो वह मुसलमान उसे ले गया होता। यह खबर मिलते ही जो स्त्रियां गली में पीढ़े बिछाकर बैठी थीं, वे पीढ़े उठाकर घरों के अन्दर चली गयीं। गली में खेलते बच्चों को भी उन्होंने पुकार-पुकारकर घरों के अन्दर बुला लिया। मनोरी गनी को लेकर गली में दाखिल हुआ, तो गली में सिर्फ एक फेरीवाला रह गया था, या रक्खा पहलवान जो कुएं पर उगे पीपल के नीचे बिखरकर सोया था। हां, घरों की खिड़कियों में से और किवाड़ों के पीछे से कई चेहरे गली में झांक रहे थे। मनोरी के साथ गनी को आते देखकर उनमें हल्की चेहमेगोइयां शुरू हो गयीं। दाढ़ी के सब बाल सफेद हो जाने के बावजूद चिरागदीन के बाप अब्दुल गनी को पहचानने में लोगों को दिक्कत नहीं हुई।

वह था तुम्हारा मकान, मनोरी ने दूर से एक मलबे की तरफ इशारा किया। गनी पल-भर ठिठककर फटी-फटी आंखों से उस तरफ देखता रहा। चिराग़ और उसके बीवी-बच्चों की मौत को वह काफी पहले स्वीकार कर चुका था। मगर अपने नये मकान को इस शक्ल में देखकर उसे जो झुरझुरी हुई, उसके लिए वह तैयार नहीं था। उसकी ज़बान पहले से और खुश्क हो गयी और घुटने भी ज्यादा कांपने लगे।

यह मलबा? उसने अविश्वास के साथ पूछ लिया।

मनोरी ने उसके चेहरे के बदले हुए रंग को देखा। उसकी बांह को थोड़ा और सहारा देकर जड़-से स्वर में उत्तर दिया, तुम्हारा मकान उन्हीं दिनों जल गया था।

गनी छड़ी के सहारे चलता हुआ किसी तरह मलबे के पास पहुंच गया। मलबे में अब मिट्टी ही मिट्टी थी जिसमें से जहां-तहां टूटी और जली हुई ईंटें बाहर झांक रही थीं। लोहे और लकड़ी का सामान उसमें से कब का निकाला जा चुका था। केवल एक जले हुए दरवाजे का चौखट न जाने कैसे बचा रह गया था। पीछे की तरफ दो जली हुई अलमारियां थीं जिनकी कालिख पर अब सफेदी की हल्की-हल्की तह उभर आयी थी। उस मलबे को पास से देखकर गनी ने कहा, यह बाकी रह गया है, यह? और उसके घुटने जैसे जवाब दे गये और वह वहीं जले हुए चौखट को पकडक़र बैठ गया। क्षण-भर बाद उसका सिर भी चौखट से जा सटा और उसके मुंह से बिलखने की-सी आवाज निकली, हाय ओए चिरागदीना!

जले हुए किवाड़ का वह चौखट मलबे में से सिर निकाले साढ़े सात साल खड़ा तो रहा था, पर उसकी लकड़ी बुरी तरह भुरभुरा गयी थी। गनी के सिर के छूने से उसके कई रेशे झडक़र आसपास बिखर गये।

कुछ रेशे गनी की टोपी और बालों पर आ रहे। उन रेशों के साथ एक केंचुआ भी नीचे गिरा जो गनी के पैर से छः—आठ इंच दूर नाली के साथ—साथ बनी ईंटों की पटरी पर इधर—उधर सरसराने लगा...

जले हुए किवाड़ का वह चौखट मलबे में से सिर निकाले साढ़े सात साल खड़ा तो रहा था, पर उसकी लकड़ी बुरी तरह भुरभुरा गयी थी। गनी के सिर के छूने से उसके कई रेशे झडक़र आसपास बिखर गये। कुछ रेशे गनी की टोपी और बालों पर आ रहे। उन रेशों के साथ एक केंचुआ भी नीचे गिरा जो गनी के पैर से छः-आठ इंच दूर नाली के साथ-साथ बनी ईंटों की पटरी पर इधर-उधर सरसराने लगा। वह छिपने के लिए सूराख ढूंढ़ता हुआ जरा-सा सिर उठाता, पर कोई जगह न पाकर दो-एक बार सिर पटकने के बाद दूसरी तरफ मुड़ जाता।

खिड़कियों से झांकनेवाले चेहरों की संख्या अब पहले से कहीं ज्यादा हो गयी थी। उनमें चेहमेगोइयां चल रही थीं कि आज कुछ-न-कुछ जरूर होगा... चिरागदीन का बाप गनी आ गया है, इसलिए साढ़े सात साल पहले की वह सारी घटना आज अपने-आप खुल जाएगी। लोगों को लग रहा था जैसे वह मलबा ही गनी को सारी कहानी सुना देगा-कि शाम के वक्त चिराग ऊपर के कमरे में खाना खा रहा था जब रक्खे पहलवान ने उसे नीचे बुलाया-कहा कि वह एक मिनट आकर उसकी बात सुन ले। पहलवान उन दिनों गली का बादशाह था। वहां के हिन्दुओं पर ही उसका काफी दबदबा था-चिराग तो खैर मुसलमान था। चिराग हाथ का कौर बीच में ही छोडक़र नीचे उतर आया। उसकी बीवी ज़ुबैदा और दोनों लड़कियां, किश्वर और सुलताना, खिड़कियों से नीचे झांकने लगीं। चिराग ने ड्योढ़ी से बाहर कदम रखा ही था कि पहलवान ने उसे कमीज के कॉलर से पकडक़र अपनी तरफ खींच लिया और गली में गिराकर उसकी छाती पर चढ़ बैठा। चिराग उसका छुरेवाला हाथ पकडक़र चिल्लाया, रक्खे पहलवान, मुझे मत मार! हाय, कोई मुझे बचाओ! ऊपर से ज़ुबैदा, किश्वर और सुलताना भी हताश स्वर में चिल्लाईं और चीखती हुई नीचे ड्योढ़ी की तरफ दौड़ीं। रक्खे के एक शागिर्द ने चिराग की जद्दोजेहद करती बांहें पकड़ लीं और रक्खा उसकी जांघों को अपने घुटनों से दबाए हुए बोला, चीखता क्यों है, भैण के...तुझे मैं पाकिस्तान दे रहा हूं, ले पाकिस्तान! और जब तक ज़ुबैदा, किश्वर और सुलताना नीचे पहुंचीं, चिराग को पाकिस्तान मिल चुका था।

आसपास के घरों की खिड़कियां तब बन्द हो गयी थीं। जो लोग इस दृश्य के साक्षी थे, उन्होंने दरवाजे बन्द करके अपने को इस घटना के उत्तरदायित्व से मुक्त कर लिया था। बन्द किवाड़ों में भी उन्हें देर तक ज़ुबैदा, किश्वर और सुलताना के चीखने की आवाजें सुनाई देती रहीं। रक्खे पहलवान और उसके साथियों ने उन्हें भी उसी रात पाकिस्तान दे दिया, मगर दूसरे तबील रास्ते से। उनकी लाशें चिराग के घर में न मिलकर बाद में नहर के पानी में पायी गयीं।

दो दिन चिराग के घर की छानबीन होती रही थी। जब उसका सारा सामान लूटा जा चुका, तो न जाने किसने उस घर को आग लगा दी थी। रक्खे पहलवान ने तब कसम खायी थी कि वह आग लगाने वाले को जिन्दा जमीन में गाड़ देगा क्योंकि उस मकान पर नजर रखकर ही उसने चिराग को मारने का निश्चय किया था। उसने उस मकान को शुद्ध करने के लिए हवन-सामग्री भी ला रखी थी। मगर आग लगाने वाले का तब से आज तक पता नहीं चल सका था। अब साढ़े सात साल से रक्खा उस मलबे को अपनी जायदाद समझता आ रहा था, जहां न वह किसी को गाय-भैंस बांधने देता था और न ही खुमचा लगाने देता था। उस मलबे से बिना उसकी इजाजत के कोई एक ईंट भी नहीं निकाल सकता था।

-जारी

• शायरी...

तुम्हें ऐसा बे-रहम जाना न था
ग़रज़ क्या कहें दिल लगाना न था
अगर उस गली से निकलते तो फिर
दो आलम में अपना ठिकाना न था

◆ ◆ ◆

लिया इम्तिहान-ए-वफ़ा ही में जी
हमें या तलक आज़माना न था
वो था कौन सा तेरा तीर-ए-सीतम
कि मैं आह उस का निशाना न था

◆ ◆ ◆

किया किस की आंखों ने 'रासिख़' पे सेहर
वो आगे तो ऐसा दिवाना न था

-रासिख़, अज़ीमाबादी

◆ ◆ ◆

बदन में जो ख़लाओं का नगर था वो भी
ख़ाली है
मिरी तहज़ीब का तन्हा मनारा ले गया कोई
जहां से भाग निकला था वहीं पत्थर हुआ आख़िर
मुझे सांसों की सरहद तक दोबारा ले गया कोई

-रियाज़ लतीफ़

• चंद रुबाइयात ...

मेरी बला को हो, जाती हुई बहार का
ग़म।
बहुत लुटाई हैं ऐसी जवानियां मैंने॥
मुझीको परदये—हस्ती में दे रहा है
फ़रेब।
वो हुस्न जिसको किया जलवा आफ़रीं
मैंने॥
मेरी बेख़ुदी है उन आंखों का सदक़ा।
छलकती है जिन से शराबे—मुहब्बत॥
उलट जायें सब अक्लो—इरफ़ां की बहसें।
उठा दूं अभी पर नक़ाबे—मुहब्बत॥ —अली अख़्तर 'अख़्तर'